“दुर्वासना प्रतिकार दशकम्”

विद्यारण्य स्वामी कृत संस्कृत टीका

संकलन कर्त्ता सुनील दत्त वशिष्ठ

भूमिका

"न हि ज्ञानं किञ्चित् उत्पाद्यते; न ह्यात्मनो रूपान्तरमपि विद्यया क्रियते।"

"ज्ञान कोई उत्पन्न की जाने वाली वस्तु नहीं है। न ही आत्मा का कोई नया रूप विद्या से किया जाता है।"

भावार्थ: आत्मा का ज्ञान उत्पन्न नहीं होता, वह पहले से ही विद्यमान है। विद्या (श्रवण, मनन, निदिध्यासन) केवल अज्ञान रूपी आवरण को हटाती है।

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्।"

भावार्थ: ज्ञान का स्वभाव है तत्त्वदर्शन करना — तत्त्व का निर्माण करना नहीं।

ब्रह्मज्ञान में कोई साक्षात् साधन नहीं है, बल्कि अधिकारी के अंतःकरण की शुद्धि में ही साधन की उपयोगिता है. अंतःकरण की शुद्धि के उपरान्त ज्ञान में ऐसे ही देर नहीं होती जैसे हमारी गले की कण्ठी को स्मरण होने में या दर्पण को साफ़ होने के उपरान्त उसमें रूप की उपलब्धि में देर नहीं लगती !

ब्रहमज्ञान उत्पाधय या संस्कार्य नहीं, वो तो दुश्चरित्र के कारण छुपा हुआ है, अतः दुश्चरित्र रूपी शत्रुओं का पर्दा हटाए बिना बिना परमात्म ज्ञान संभव नहीं इसलिए उनके विनाश के लिए उनको जानकर उनका त्याग अति आवश्यक हो जाता है,

इसलिए स्वामी श्री विद्यारण्य जी ने समस्त मनुष्य के कल्याण के लिए इस पुस्तक में उन दुश्चरित्रों का वर्णन किया है जिससे साधक उनको जान कर साधन के मार्ग में आगे बढ़ सके !

संकलनकर्ता

"ॐ "

श्लोक १

मूल श्लोक: प्रातर्वैदिककर्मतस्तदनु सद्वेदान्तसच्चिन्तया।
पश्चाद्भारतमोक्षधर्मकथया वासिष्ठरामायणात्।
सायं भागवतार्थतत्त्वकथया रात्रौ निदिध्यासनात्।
कालो गच्छतु नः शरीरभरणं प्रारब्धकन्ठार्पितम्॥ १॥

हिन्दी:

प्रातःकाल वैदिक कर्मों का अनुष्ठान हो, फिर श्रेष्ठ वेदान्त की विचारचिन्ता हो। दोपहर में महाभारत और वासिष्ठ रामायण की मोक्ष से सम्बन्धित कथाओं का मनन हो। संध्या के समय श्रीमद्भागवत के तत्व का श्रवण हो और रात्रि आत्मचिन्तन (निदिध्यासन) में व्यतीत हो। शरीर का पालन मात्र प्रारब्धवश हो — जीवन का प्रत्येक क्षण आत्मसाधना में व्यतीत हो।

श्लोक २

अज्ञानं त्यज हे मनो मम सदा ब्रह्मात्मसद्भावनात्।
सङ्कल्पानखिलानपि त्यज जगन्मिथ्यात्व सम्भावनात्।
कामं साधनसाधनाश्रम परिध्यानादजस्रं त्यज।
क्रोधं तु क्षमया सदा जहि बलाल्लोभं तु सन्तोषतः॥ २॥

हिन्दी:

हे मन! तू सदा अज्ञान को त्याग कर ब्रह्म-आत्मा के स्वरूप का चिन्तन कर। समस्त संकल्पों को संसार की असत्यता के बोध से त्याग दे। साधन-साध्य की कठिनता को देखकर कामना का निरसन कर। क्रोध को क्षमा से और लोभ को सन्तोष के बल पर त्याग दे।

श्लोक ३

जिह्वोपस्थसुखभ्रमं त्यज मनः पर्यन्तदुःखेक्षणात्।
पारुष्यं मृदुभाषणात्त्यज वृथालापश्रमं मौनतः।
दुस्सङ्गं त्यज साधुसङ्गमबलाद्गर्वं तु भङ्गेक्षणात्।
निन्दादुःखमनिन्द्यदेवमुनिभिर्निन्दाकथासंस्कृतेः॥ ३॥

हिन्दीः

हे मन! जिह्वा और उपस्थ के सुख की भ्रान्ति को उसके अन्त में मिलने वाले दुःख को देखकर त्याग दे। कठोर वाणी को कोमलता से और व्यर्थ बोलने की आदत को मौन से त्याग। दुर्जनों का संग छोड़ कर सज्जनों का संग ग्रहण कर। गर्व को उसके पतन की संभावना देखकर त्याग दे। निन्दा से उत्पन्न दुःख का त्याग कर, क्योंकि देवता और मुनि कभी निन्दा नहीं करते।

श्लोक ४

निद्रां सात्विकवस्तुसेवनतया स्वप्नं सदा जागरात्।
रोगान् जीर्णमिताशनाद्दैन्यं महाधैर्यतः।
अर्थानर्थपरिग्रहं त्यज वृथा संसर्गसन्त्यागतः।
स्त्रीवाञ्छां त्यज दोषदर्शनबलाद्दुःखं सुखात्मेक्षणात्॥ ४॥

शुद्ध हिन्दीः

सात्त्विक वस्तुओं के सेवन से निद्रा को घटाओ, स्वप्नों को जागरूकता से त्यागो। मित और सुपाच्य आहार से रोगों को दूर करो और महान धैर्य से हीनता को हटाओ। अनर्थकारी धन संग्रह को त्याग दो और व्यर्थ संग से उत्पन्न क्लेश से दूर रहो। स्त्री विषयक वासना को उसमें उपस्थित दोषों के विचार से छोड़ दो, और आत्मा को ही परम सुख रूप मानो।

श्लोक ५

दारासक्तिमनादरात्सुतधनासक्तिं त्वनित्यत्वतः।
स्नेहं मोहविसर्जनात्करुणया नैष्ठुर्यमन्तस्त्यज।
औदासीन्यसमाश्रयात्त्यज सुहृन्मित्रारिदुर्वासना।
सर्वानर्थकरान्दशेन्द्रियरिपूनेकान्तवासान्जहि॥ ५॥

हिन्दी:

पत्नी के प्रति आसक्ति को उपेक्षा से त्यागो, पुत्र और धन की ममता को उनके नश्वर स्वरूप को जानकर छोड़ो। मोह का त्याग कर, करुणा के साथ स्नेह की ममता भी छोड़ो। उदासीनता के आश्रय से मित्र, सखा, शत्रु आदि में समता रखो। दसों इन्द्रियों रूपी शत्रुओं की दुर्वासनाओं का एकान्त में अभ्यास द्वारा नाश करो।

श्लोक ६

आलस्यं त्वरया श्रमं श्रमधिया तन्द्रीं समुत्थानतः।
भेद भ्रान्त्यभेददर्शनबलात्तां मिथ्यात्वतः सत्यताम्।
मर्मोक्तिं निजमर्मकर्मकथया क्रोधं स्वसाम्येक्षणात्।
आक्रोशं कुशलोक्तितस्य च मनश्छिन्द्यप्रमादो भयम्॥ ६॥

शुद्ध हिन्दी:

आलस्य को तत्परता से, श्रम को उसके उद्देश्य के ज्ञान से, तन्द्रा को उत्साह से, भेद को अद्वैत-दृष्टि से और मिथ्या को सत्य के ज्ञान से हटा दो। दूसरों की मर्मवाणी को आत्मकथन समझकर क्रोध को समानता से नष्ट करो। आक्रोश का प्रतिकार शुभ वाणी से करो और मन को प्रमाद और भय से मुक्त करो।

श्लोक ७

भूतार्थस्मरणं वृथा भ्रमधिया प्राप्तं तु हानेक्षणात्।
भव्यार्थव्यसनं सदा त्यज मनः प्रारब्धचोद्येक्षणात्।
शिष्टाशिष्टजनक्रियास्त्यज वृथाकष्टानुसन्धानतः।
स्नेहाद्वेषमतिं सदा त्यज जनं भस्मांस्तथा संस्मृतेः॥ ७॥

हिन्दी:

भूतकाल की स्मृति भ्रममूलक है — त्याज्य है। भविष्य की चिन्ता भी प्रारब्ध से प्रेरित होने के कारण त्यागने योग्य है। श्रेष्ठ-अश्रेष्ठ जन की क्रियाओं के निरर्थक चिन्तन से बचो। स्नेह और द्वेष दोनों को त्यागो, और सब व्यक्तियों को भस्म समान नश्वर जानो।

श्लोक ८

अध्यात्मादि भवं सदा त्यज मनस्तापं स्वभावेक्षणात्।
वैषम्यं समभावतः परकथा विक्षेपमक्षोभतः।
धिक्कारादि भवन्तु दुःखमनिशं तद्योग्यता भावनात्।
तज्ज्ञातज्ज्ञशिशून्क्षमस्व कृपया कर्मक्षया ताडनम्॥ ८॥

हिन्दी:

अध्यात्म के विरोधी भावों को त्यागो और स्वभाव का अवलोकन कर मन की पीड़ा को हटाओ। सबमें समत्व की दृष्टि रखकर पक्षपात और द्वेष का नाश करो। निन्दा-अपमान को योग्यता की परीक्षा मानकर सह लो। ज्ञानी और अज्ञानी को बालक समान समझकर क्षमा करो — यही कर्म क्षय का उपाय है।

श्लोक ९

आयुर्गच्छति पेटिकामिव जलं सन्त्यज्य देहं जवात्।
गच्छन्तीन्द्रियशक्तयोऽपि कुलटा यद्वन्नरं निर्धनम्।
प्रज्ञा गच्छति दावदाहसमये श्रेणी मृगीणामिव।
ज्ञात्वा सत्वरमाश्रयमात्मपदवीं देहं वृथा मा कृथाः॥ ९॥

शुद्ध हिन्दी: आयु पेटिका में पड़े जल की तरह धीरे-धीरे नष्ट हो रही है, अतः इस देह को शीघ्र आत्मपद की ओर मोड़ो। जैसे कुलटा स्त्री निर्धन को छोड़ देती है, वैसे ही इन्द्रियशक्तियाँ भी अन्त में छोड़ जाती हैं। बुद्धि भी संकट में मृगों की तरह भाग जाती है — इसलिए शीघ्र आत्मज्ञान का आश्रय लो; इस देह को व्यर्थ न करो।

श्लोक १०

धैर्यैरावतशान्तिधेनुदमना मन्दारवृक्षं सदा।
मैत्र्याद्यप्सरसं विवेकतुरगं सन्तोषचिन्तामणिम्।
आत्मज्ञानमहामृतं समरसं वैराग्यचन्द्रोदयम्।
वेदान्तार्णवमाश्रयन्ननुदिनं सेवस्व मुक्तिश्रियम्॥ १०॥

शुद्ध हिन्दी: धैर्य रूपी ऐरावत, शांति रूपी कामधेनु, इन्द्रियनिग्रह रूपी कल्पवृक्ष, मैत्री आदि सद्गुण रूपी अप्सरा, विवेक रूपी अश्व, संतोष रूपी चिंतामणि, आत्मज्ञान रूपी अमृत और वैराग्य रूपी चंद्रमा को लेकर — वेदान्त रूपी महासागर में प्रवेश करो और प्रतिदिन मुक्ति रूपी लक्ष्मी की सेवा करो।

ॐ शांति शांति शांति